# सद्गुरु तत्व बोध
# SADGURU TATV BODH

**Publisher**
Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
"Sai Niketan" 5, Jasola Vihar,
(Behind Apollo Hospital)
New Delhi-110025
Ph: 26956561-62
Fax: 91-11-26955261
E-mail: saikalp@gmail.com
saikalp@yahoo.com

**Patron**
Lalita Bhavani Shankar Bhatte

**Editorial**
Vijay K.Varma
Jogesh Grover

**Subscription**

INLAND

Yearly ........................ Rs.100.00
Life Time ..................... Rs.500.00

OVERSEAS

Yearly ........................ US$ 50.00
Life Time ..................... US$200.00

**Printed by**
PNV CREATIONS
New Delhi-110008
Phone: 011-41544399

PUBLISHED EVERY MONTH

© All rights reserved with the Publisher

ॐ

"ॐ श्री साईनाथाय नमः"
"ॐ श्री सद्गुरुनाथ दादाय नमः"

नई दिल्ली — श्री साई शके : 27
अंक—पिचासी — फ़ेब/ मार्च, 2009

## शक्तिपीठ

साईंनाथ महाराज ने दादाजी से कहा, "शक्तिपीठ यह पिंड और ब्रह्मांड का एकत्व है। इसके लिए जैसे पिंड को आकार देना पड़ेगा उसी तरह निर्गुण निराकार ब्रह्मांड को भी आकार देना पड़ेगा। मैं ब्रह्मांड, तूं पिंड—हम दोनों मिलकर शक्तिपीठ की स्थापना करेंगे।" यह कार्य इतना आसान न था। मनुष्य सहजता से परमार्थिक मार्ग का अवलंब करने में तैयार नहीं होता। उसे इसमें रुचि प्राप्त हो इसकी खातिर प्रथमतः मानव जीवन के दुःख परम्पराओं का ज्ञान दादाजी को प्राप्त करना पड़ा और निज प्रतिकूल परिस्थितियों का मनुष्य को सामना करना पड़ता है उसमें से उसे मुक्त करके सेवा मार्ग की पहचान करा देने के लिए आसान निराकरण पद्धतियों की सिद्धता औदुंबर में करनी पड़ी। उम्र तीस साल, इसके पहले पाँच साल मिलीटरी में अच्छी नौकरी करके कमीशण्ड आफिसर के पद के लिए चुने गये,

इस नौकरी को छोड़कर पूणे में आने के बाद सरकारी नौकरी उत्तम तरीके से करके कचहरी में सब को अपने दिलदार उम्दे तथा नटखट स्वभाव की खातिर प्रिय हुए, तथा विवाह को केवल तीन साल ही पूरे हुए ऐसी परिस्थितियों में गुरू आज्ञा का पालन करके नौकरी से इस्तीफा देकर निराकरण पद्धति सिद्ध करने के लिए औदुंबर को प्रस्थान करने वाले सद्गुरू दादाजी की मन की हालत कैसी हुई होगी इसका विचार क्या हम कर सकते हैं ? इन सिद्ध की हुई निराकरण पद्धति का लाभ बाद में असंख्य भक्तों को देने के बाद पच्चीस सालों के बाद फिर से ऐहिक प्राप्ति बंद करके नरसोवा वाडी को जाने की आज्ञा हुई तथा उसके बाद पाँच सालों में ब्रह्मांड और पिंड को आकार देने का कार्य जब पूरा हुआ तक शक्तिपीठ का आवाहन हुआ। जिस शक्ति को धारण करना था उसकी प्रखरता कम करकें उसे सौम्य रूप देना था जिसके लिए उस शक्ति को खुद के देह में समा लेना था और उसी समय भक्तों का विकास भी करना था। यह करते समय उनकी पचन क्रिया, श्वसन क्रिया तथा रक्ताभिसरण क्रिया में असंतुलन होता था मगर किन मुसीबतों से गुजरना पड़ा इसके बारे में जरा सी भी नाराजगी दादाजी ने कभी भी व्यक्त नहीं की, हमें इस बात पर गौर करना चाहिए।

जब किसी देवता का मंदिर बाँधा जाता है तब मूर्ति की स्थापना करके तथा वेदमंत्रों के उच्चारण से शक्ति धारण की जाती है। फिर शास्त्र परत्वे उस शक्ति का लाभ प्राप्त करने के लिए पूजा अर्चना, नैवेद्य, अभिषेक आदि किये जाते हैं। ये सभी पूजोपचार अंगिकार किये बिना उस शक्ति का लाभ नहीं होता। पूर्व कालानुसार ये जो पूजोपचार होते आ रहे हैं उनमें बदल करने का अधिकार किसी भी साधक ने आज तक नहीं किया जिसकी वजह से कृपा प्राप्ति के लिए ''पुरोहित'' जैसे किसी मध्यस्त की आवश्यकता होती है। दादाजी ने इन सभी उपचारों में बदल किया। विश्व की सभी देव देवता जिस आदी शक्ति से अवतीर्ण हुए उस मूल शक्ति का पीठ स्थापन करने का संकल्प उनका था **मगर उस पीठ की स्थापना के बाद वहाँ की शक्ति सुलभता से भक्तों को प्राप्त कराने का साधन महत्वपूर्ण था क्योंकि ऐसा होने के बाद ही विश्व के सभी धर्म, जाति, पंथ, आस्तिक-नास्तिक लोग इस शक्ति की अनुभूति ले सकेंगे तथा एक हो सकेंगे। यह सब करने के लिए दादाजी ने इस शक्ति को खुद के देह में समायी, सौम्य की, प्रार्थना एवं ऊँकार साधना के पूजा पद्धति की आदत उसे लगायी और उसके पश्चात् ही उस शक्ति को धारण कर लिया। ''ईश्वर एक है''**

**''सभी धर्म समान हैं'' यह तत्वज्ञान दादाजी ने शाब्दिक स्वरूप में रखा नहीं बल्कि उसे ''अनुभूति'' स्वरूप में सिद्ध करके रखा तथा यह करने के लिए अपना सर्वस्व गुरू चरणों में अर्पित किया।** अर्थात् ऐसा शक्तिपीठ समूचे विश्व में एक ही है जिस शक्ति का लाभ लेने के लिए भक्त को किसी मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं होती। यह शक्ति भक्त के पूजाविधि से ही जागृत होने वाली नहीं है बल्कि स्थापना के पहले ही वह चैत्व्य युक्त तथा शक्तिमान है। पिछले 12 सालों में दुनिया के सभी धर्म, पंथ के लोग इस शक्ति में से सुख, शांति, समाधान प्राप्त कर रहे हैं यह नजारा देखने को मिलता है।

शक्ति धारण करने के लिए ''वस्त्र'' एक माध्यम है। कोई भी धार्मिक विधि करते समय कंधे पर वस्त्र लिया जाता है तथा अंत में उस विधि द्वारा प्राप्त हुआ प्रसाद उसी वस्त्र में धारण किया जाता है। अत: सूफी पंथ की शक्ति के लिए ऊनी आसन, नाथ पंथ की शक्ति के लिए रेशमी वस्त्र, दत्तपंथ के प्रतीक के रूप में दादाजी को वाडी में दिया गया स्वामी जी का उपवस्त्र — ये सभी वस्त्र पूजन की गयी शिला के ऊपर रखे गये तथा मुम्बई, पूणे, कराड, बेलगाम, गोवा और रत्नागिरि के कुल 21 सेवकों के उपस्थिति में अनुष्ठान किया गया। अंत में दादाजी को बालेकुंद्री में श्रीपंत महाराज का जो उपवस्त्र दिया गया था उसे खोलकर सभी सेवकों ने उसे पकड़कर खड़े होकर प्रार्थना करी तथा फिर उस वस्त्र को तह करके शिला पर सबके ऊपर रखा गया। इसका अर्थ यह था कि जो शक्ति प्रगट होने वाली है उसका माध्यम शब्दब्रह्म है तथा आरती एवं ऊँकार साधना से उसका कार्य निरन्तर हो ऐसी योजना की गयी। यह शिला इन सभी वस्त्रों समेत शक्तिपीठ के लिए बनाये गये साईंधाम की भूमि में चौरस जगह पर रखी गयी। वहीं पर सद्गुरू दादा ने उसका पूजन किया। इसके अलावा उस भूमि में हल्दी कुंकुम (ऋद्धि सिद्धि), नारियल-गुड़, गंध-अक्षता, फूल, गोरस, पंच खाद्य, 5 फल, पान-सुपारी, श्रीफल, इत्र, सोने की वास्तु प्रतिमा, पंचरत्न (सूर्य मंडल), सोना, चांदी, तांबा ये तीन धातु, सागर तीर्थ आदि वस्तुएं रखकर फिर वह खुली जगह बंद की गयी तथा फिर आरती गायी गयी। इसकी वजह यह थी कि साईंनाथ जी ने दादाजी से कहा था, ''मेरे घर की वास्तुशांत मत करो। पुरोहित के मुख से झूठा हुआ वेदमंत्र मुझे नहीं सुनना। मेरा वास्तु सिद्ध करने के लिए मैं समर्थ हूँ। यहाँ ऊँकार का उच्चार होने दो, पंत का शब्द ब्रह्म गाया जाने दो फिर देखना इस दीवार की हर ईंट ब्रह्म का उच्चार करेंगी।''

गुरूवार 14 अप्रैल 1983, श्री साईं शके 1, इस दिन शक्तिपीठ की तांबे की प्रतिमा और अन्य आठ केंद्रों की शक्तिपीठ प्रतिमाओं का पूजन करके मूल शक्तिपीठ प्रतिमा उस जगह पर दादाजी ने स्वयं अपने हाथों द्वारा स्थापना की। उस समय वे अत्यंत भाव-विभोर हो गये थे। प्रतिमा स्थापन करते समय भक्त भाविकों ने श्रीसाईंनाथ महाराज का जयघोष किया। एक अनोखी अनुभूति सबको मिली। इसी दिन गोवा केंद्र का स्थलांतर फरवरी में हुआ। गोवा के सभी भक्त भाविकों ने मोटर सजाकर श्रीबाबा की तस्वीर का जुलूस निकालने का सोचा था परन्तु श्रीबाबा ने दादाजी से कहा — "मैं कोई नेता या अभिनेता नहीं हूँ अत: मुझे सजधजकर नहीं जाना। 21 साल पहले जैसा मैं सहजता से गावा में पधारा था वैसे ही अब सहजता से मुझे मेरे घर में ले चलो।" फिर दादाजी की "तपस्विनी" मोटर अम्बेसडर (एम.टी.जे. 5799) में श्रीबाबा की तस्वीर रखकर साईंधाम में लायी गयी। सद्गुरू दादाजी की पिछली 35 वर्षों की अविरत तपस्या का फल उन्हें मिला। समूचे विश्व के कल्याण के लिए अखंड शक्ति का स्त्रोत कार्यान्वित हुआ।

इसी संबंध में घटी हुई घटना का उल्लेख यहाँ करना उचित रहेगा। कर्नाटक के एक भक्त के मित्र आन्ध्रप्रदेश में अपने कुलदेवता के दर्शन के लिए हर साल जाते थे। उनके घर में मुसीबतों के पहाड़ टूट पड़े थे फिर भी श्रद्धा से वे देवतार्जन किया करते थे। शक्तिपीठ स्थापना के पहले एक साल जब वे नियमानुसार देवता के दर्शन के लिए गये थे तब पूजा विधि करने के बाद वहाँ के जो पुरोहित थे उन्हें उस देवी का संचार हुआ तब उस भक्त को कहा गया, "तुम लगातार सेवा करते आये हो। तुम्हें काफी मुसीबतें झेलनी पड़ रही हैं पर केवल एक साल और धीरज रखो। अगले साल मैं एक प्रखर शक्ति में समा जाऊँगी फिर मैं तुम्हारी इन समस्याओं से मुक्त करूँगी।" सद्गुरू दादा ने आरम्भ किया हुआ कार्य इस तरह विश्वव्यापी बनाया।

आठवें सम्मेलन में शक्तिपीठ का आवाहन विधिवत हुआ। तब प.पू. हाजीमलंग बाबा की परिचय सुनने का मौका मिला। उन्होंने कहा, "विश्व के तीन तत्व हैं — ब्रह्मा, विष्णु, महेश — ये परब्रह्म हैं यह कहते-कहते वेद भी थक गये। लेकिन उन्हें साक्षात् करने की ताकत किसकी है? तीन में से एक प्राप्त हुआ और दो नहीं हुआ तो साक्षात परब्रह्म नहीं हुआ। तीन मिलके आयेंगे तो परब्रह्म हैं। वो ताकत हमारे बच्चे ने पैदा की और आज यह दुनिया की मुश्किल की चीज आपकी झोली में हम लोग दे रहे हैं। आगे

आप दुनिया को प्रेम देते जाइये। एक दिन ऐसा आयेगा कि दुनिया में प्रेम का गीत गाया जा रहा होगा। वो सोने का दिन आने के लिए कोई मुश्किल नहीं जब हमारा तन-मन-धन गुरू से मिला हुआ है। मुझे आज बहुत खुशी है और यह खुशी की बात मेरी सैकड़ों प्यारी विभूतियाँ हैं जो आज के दिन का इंतजार करते कई सालों तक बैठी थीं उनको बताना चाहता हूँ, इसके लिये आपकी इजाजत चाहता हूँ। खुदा सलामत रखे आप दुनिया वालों को। खुदा हाफ़िज़।''

शक्तिपीठ के कार्य की योजना कितनी कुशलता से और सबूरी से दादाजी ने कार्यान्वित की। यह कार्य अकेले से नहीं निपटेगा, इसमें अनेकों की सहायता की आवश्यकता है यह जानने के बाद उन्होंने विभूतियों के मार्ग दर्शन के अनुसार राह निकाली जिसमें ब्रह्मांड को आकार देने के लिए कम समय लगा मगर पिंड को आकार देने के लिए 25 साल लगे। इसके लिए उन्होंने दिन-रात परिश्रम करके दु:खी लोगों को दिलासा तथा प्रेम दिया, ''आरती'' को एक अलग ही रूप देकर सुनने वालों के दिल को छूकर उनके मन का विकास हो यह देखा तथा ''मुलाखत'' याने पोथी पुराण के बारे में प्रवचन यह स्वरूप न रखकर एक अलग परन्तु सुनने वालों के मन के गहराई तक जायेगा ऐसा स्वानुभवसिद्ध तत्वज्ञान का लाभ करा दिया। इतना कार्य लगातार 25 साल करके जिन भक्तों को इस मार्ग में रुचि मिली उनका दीक्षापरत्वे विकास एक साथ साधना, जीवात्मा और मन इन माध्यमों से करने के लिए सम्मेलन आयोजित किये तथा आखिर में नाथ पंथ के दीक्षा का लाभ करा देकर शक्ति का आवाह्न किया। इस विधि के लिए करीब साढ़े तीन सौ भक्त हाजिर थे परन्तु उन्होंने इस जन्म में मिले इस **अलौकिक गुरूमार्ग का लाभ मिलने के बाद इस गुरूमार्ग में अपना भी कुछ हिस्सा ''कर्तव्य'' के रूप में इसका ज्ञान पाकर आगे बढ़ने के लिए दादाजी को हजारों भक्तों के सुख-दु:ख से समरस होना पड़ा यह बात हमें भूलना नहीं चाहिए।** एक अकेले व्यक्ति ने इस अध्यारण मार्ग के इतने निराकरण विमोचन तथा दीक्षा पद्धति साध्य कर लिये इसका जीता जागता उदाहरण सद्गुरू दादाजी के अलावा अन्य कोई दे नहीं सकता। फिर भी कार्य पद्धति में कोई भी खर्चाऊ विधि तथा कठिन पद्धति किये बिना उन्होंने हजारों भक्तों को प्रेम ही दिया तब भी उनमें से बहुत कम भक्त इस कार्य में सहयोग देने को तैयार हुए। इस मनुष्य स्वभाव का परिचय अनुभव से मिला अर्थात् इसका पूरा ज्ञान दादाजी को तो था ही क्योंकि ''दिया उसका भला, नहीं दिया उसका

भी भला'' यह सूफी तत्वज्ञान उनका अंगभूत सद्गुण बन गया था। इसमें ''दिया'' का अर्थ पै-पैसा, धन-सम्पत्ति यह न होकर **''इह जन्म में प्राप्त जीवन का कुछ अंश औरों के कल्याण के लिए दे दें'' ऐसा है और ''जिसने मुझे दिया तांबे का, उसको तू दे सोने का इस दूसरे ब्रीदवाक्य का अर्थ'' ईश्वरी कार्य में जो सहभागी बनता है उसके जीवन का, उसके परिवार का पीढ़ी दर पीढ़ी में उत्कर्ष होता रहेगा, सोना हो जायेगा ''ऐसी यह दुआ है।''**

''अवधान'' दादाजी का स्थायीभाव था। इतना असाधारण अधिकार कर्ममार्ग, ज्ञानमार्ग तथा भक्तिमार्ग में प्राप्त करने पर भी अहंकार का लवमात्र उनमें न था। किसी भी प्रकार का अलगाव उन्होंने कभी नहीं दिखाया। सर्व सामान्य मनुष्य को उनके साथ रहने से सकून मिले ऐसा ही दादाजी का बर्ताव था। ''शक्तिपीठ का कार्य हम सबको मिलकर करना है'' ऐसा वे बार-बार सम्मेलन में कहा करते थे मगर इससे भी परमोच्च बिंदू यह था जब बतीस शिराला में नाथपंथ का अनुग्रह भक्तों को प्राप्त होने के बाद जो निवेदन दादाजी ने दिया था उस निवेदन का संबोधन ''भक्त-भाविकों'' ऐसे न लिखते हुए ''गुरूबंधुभगिनी को'' ऐसा लिखकर अंत में उन्होंने ''आपका गुरूबंधु दादा भागवत'' ऐसा लिखा था। संक्षेप में दादाजी का व्यक्तिमत्व इस प्रकार था —

''बंदा ऐसा हो
जिसकी ताकत का अंदाजा करने के लिए
खुदा को नमाज करनी होगी।''

शक्तिपीठ स्थापना के बाद सद्गुरू दादाजी ने हाजिर सेवकों के दिल को छू लेने वाला बोध किया। उन्होंने कहा,

''शक्तिपीठ स्थापना आपके सहयोग से हुई तत्पूर्व जिस शक्ति का अनुग्रह मुझे मिला था वही दीक्षा तुम्हें दी अत: अब गुरू और भक्त यह रिश्ता न रहकर आप सब मेरे गुरूबंधु बने हो। अब आप शक्ति के पूजक बन गये हैं। पूजन लेने का मेरा अधिकार अब नहीं रहा। गुरूमार्ग में यह सब करना पड़ता है। शिष्यों को यह विकसित बनाकर शक्ति से जोड़ देना तथा स्वयं परे हटना — अगर यह किया गया तो ही कार्य निरन्तर स्वरूप में चलता रहता है। इसके आगे मैं पूजन, गुरू दक्षिणा, माला गुलदस्ते आदि स्वीकार नहीं करूँगा। इसके आगे अब किसी भी उत्सव के दिन मेरे अलावा गुरू शक्ति का आसन रखकर उसी का पूजन आपको करना है। यह कार्य विश्व के अंत तक चलता रहे इसके लिए ऐसी आसन सिद्धता मैंने की है। व्यक्ति से जुड़ जाने के बाद शिष्य पूर्णत्य प्राप्त नहीं कर सकता ऐसा सिद्धांत है। यह कार्य श्रीसाईनाथ महाराज की दुआ से हुआ।

उनके पास क्या है इसका अंदाजा किसी को नहीं हुआ। शिरडी अब केवल ''ऐहिक शिरडी'' बनकर रह गयी है। लोग वहाँ से झोलियाँ भर-भर के ले जा रहे हैं मगर समाधान नहीं हैं। शक्तिपीठ बाबा की ''परमार्थिक शिरडी'' है। विश्व का शक्तिपीठ स्थापन करके मैंने उन्हें जगद्गुरू बना दियी है। आप मुझे कौन सा स्थान देंगे ? मेरे लिए इस त्रिभुवन में ऐसा कोई स्थान बाकी नहीं रहा क्योंकि मैंने त्रिभुवन की शक्तियाँ एकरूप की हैं। फिर मुझे आप कौन सा स्थान देंगे ? मुझे सिर्फ आप भक्तों के हृदय में ही स्थान दे सकेंगे। उसके लिए आपकी हर कृती काया, वाया तथा मन का एकरूपत्व होकर ही होनी चाहिए।''

''अब आपको कर्मपरत्वे जीने की कोई वजह नहीं है। जो ''कर्माधीन'' अवस्था थी उसका स्थित्यंतर ''कर्म अधीन'' अवस्था में किया है। अब जीवन की जिम्मेदारी की पहचान होकर धर्मपरत्वे जीना याने कृपा से जीना है तथा कर्म को अब कार्यार्थ व्यतीत करना है। औरों को जो सुख शांति प्राप्त होगी वही आपका कर्म है, ऐसा जीवन सद्गुरू ने आपको प्राप्त करा दिया है मगर ''औरों का कल्याण'' इसकी शुरूआत खुद के परिवार से हो यह बात ध्यान में रहे। मैं अब जन्म जन्मांतर में कार्य कर रहा हूँ इसलिए ''कामकाज'' नहीं कर सकता। सभी साधन सिद्धता तुम्हारे हवाले की है। ''जाणणे नेणाणे नव पायी वाहणे'' (जाना-अन्जाना सभी कुछ तुम्हारे चरणों में समर्पित है)। अब आगे का कार्य आप सब करें।''

आगे अब जो भी भक्त आयेगा उसे आप अनजाने में जितना देंगे, आप उतना ही सद्गुरू के निकट जायेंगे। उसके लिए आपको अपने व्यसन छोड़ने पड़ेंगे क्योंकि अब अपने सुखों का विचार करने की बजाय ''आज का मेरा आचरण गुरू मार्ग के लिए पौषक है या नहीं'' इसी विचार को आपको अपनाना है।'' जिनकी कृपा से यह सेवक अवस्था मुझे मिली उन्हें मैं किस तरह समाधान दे सकूँगा। इस विचार को आपको संभालना है। आज की मेरी यह अवस्था काफ़ी कठिन है। सूफ़ी पंथ ठीक था। उसमें 25 साल मैंने गुजारे। लाड-प्यार करा लिये मगर अब नाथ पंथ का अनुसरण करना है क्योंकि यह केवल मेरे लिए नहीं है, अगर मुझे यह अवस्था तुम्हें दिलानी है तो जो इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए पात्र नहीं है फिर भी मुझे आपको यह देनी है क्योंकि यह कार्य निरन्तर चलना चाहिए। प्रतिकूल कर्म से झगड़ने से 100 प्रतिशत ज्यादा पंथ शक्ति इसके लिए चाहिए। यह अवस्था गतिमान है। आप रुकेंगे तब भी यह नहीं रुकेगी। आज आपको यह सोचना है, ''मैं दादा

को किस तरह सहयोग दे सकूँगा। आलस करने से वह रुकेगी मगर जब देहिक माध्यम गुरू शक्ति निसर्गाधीन है। अत: उसी के मुताबिक देह का आचरण आवश्यक है। कार्य की आपकी जरूरत है इसीलिए मैं आपकी मनमानी चला रहा हूँ मगर अब आप ''भक्त'' नहीं रहें, ''मध्यस्थ'' बन गये हैं आप। यही जिम्मेदारी आपको निभानी है। आपको अपने गुरू के बारे में जितना आत्मविश्वास है उससे कई गुना ज्यादा मुझे आप पर भरोसा है इससे और सौभाग्य क्या हो सकता है ? कल जब मैं न रहूँगा तो क्या कार्य रुका रहेगा ? नहीं! क्योंकि ईश्वरी कार्य मध्यस्थ के माध्यम से होता है। यह कार्य मेरा नहीं है। ईश्वर का है। उसने मुझे कृपावंत होकर उसमें समा लिया। मैंने आपको समोया है। अब ''साथी हाथ बढ़ाना, धागा-धागा अखंड बुनेंगे'' क्योंकि इस दुनिया को जो कृपावस्त्र देना है उसके लिए एक धागा काफी नहीं है। अखंड धागों की आवश्यकता है। इसका अर्थ है कि यह कार्य अकेले से नहीं होगा तथा यहीं भावना आज सेवकों को भी रखनी चाहिए। केन्द्रों पर जो सेवक हैं उन सबको मिलकर एक ही सद्भावना से यह कार्य करना है, तभी आपके जीवन का सार्थक होगा। यह मौका बार-बार नहीं मिलने वाला। मृत्यु के बाद अगर यह बात आपने जानी तब दु:खी बनने से कोई लाभ नहीं होगा। दादाजी को कौन से शारीरिक दु:ख झेलने पड़े इसका दु:ख आप न करें क्योंकि when saints are suffering, god is offering something for the benefit of mankind (जब संत कोई पीड़ा उठाते हैं तो जान लीजिए कि भगवान दुनिया की भलाई के लिए कुछ दे रहा है।''

''जो दु:खी है उसे परमार्थ मार्ग पर ले जाना है मगर यह कार्य प्रवचन या कथा कीर्तनों से नहीं होगा। आये हुए भक्त के मन को नापना होगा इसका अर्थ है कि उसके दु:खों से एकरूप होना आवश्यक है तब ही परमार्थ विषय उसके जीवन में धारण होगा। इसके लिए ''चित्त'' अवस्था प्राप्त करनी चाहिए मगर उसके लिए मन अवस्था का पूर्ण विकास होना चाहिए तथा मन का विकास संयम एवं सहनशीलता के बगैर नहीं होता।'' इस अवस्था में जब तक आपके मन के अनुसार बातें नहीं बनेंगी तब तक अपने क्रोध पर संयम रखकर अगर आपने सहनशीलता बढ़ाने की कोशिश की तो मन का विकास होगा। इसी के लिए पहले नाथपंथ में तीर्थाटन तथा देशाटन करने का आदेश शिष्यों को दिया जाता था क्योंकि सफर से सहन-शीलता बढ़ती है और अध्यात्मका माध्यम ''चित्त'' ही है।

*...(क्रमश:) अगले अंक में*